ISSN: 2348-3083
SJIF 2016 : 4.44
UGC APPROVED SR. NO. 48612
An International Peer Reviewed & Referred
SCHOLARLY RESEARCH JOURNAL FOR
HUMANITY SCIENCE & ENGLISH LANGUAGE

मीड डे मील: आगे की सोच

विनीत कुमार सिन्हा, Ph. D.

राजनीति विज्ञान विभाग, पी जी डी ए वी महाविद्यालय सांध्य, दिल्ली विश्वविद्यालय

tobinni@gmail.com

Abstract

इस योजना की शुरुआत 1995 से हुई है। भूख, भोजन, पोषण, शिक्षा और समता के उद्देश्य को पूरा करने की अच्छी सोच के साथ एक बेहतर योजना है। वैसे, इस तरह की योजना पहली बार बीस के दशक में चेन्नई की स्थानीय शासन द्वारा लाया गया था, विद्यार्थियों को तब न्यूनतम राशि का भुगतान करना पड़ता था। स्वतंत्र भारत में सारा खर्च सरकार उठाती है। क्लास रूम में बच्चों की उपस्थिति बढ़ाने, उनकी भूख को अच्छी और पोषणयुक्त भोजन से शांत करना जिससे शिक्षा और अध्धयन पर उनका ध्यान बना रहे, हम जानते हैं कि भारत के गरीब बच्चों को मिलने वाले प्रोटीन की मात्रा से बहुत अधिक मात्रा अमीर देशों के जानवरों को मिलता है। अतः हमारे बच्चों के मानसिक और शारीरिक विकास के लिए पोषणयुक्त भोजन की आवश्यकता है। मिड डे मील योजना इसे पूरा करता है। इस योजना की एक और खासियत यह है कि भोजन करते वक्त बच्चों की सामाजिक स्थिति उनके द्वारा भोजन प्राप्त करने या फिर बैठने में कोई मायने नहीं रखता, जेंडर तटस्थ यह व्यवस्था है। कुल मिलाकर सैद्धांतिक रूप में यह योजना बहुत बेहतर है। व्यवहारिक रूप से संबंधित समस्याएं भी आयी हैं। लिंगीय और जातीय आधारित बैठने की व्यवस्था के साथ साथ कई अन्य प्रकार का भेदभाव सामने आया है, जिसकी चर्चा विस्तार से आलेख में है। 2013 में बिहार में मिड डे मिल के भोजन की वजह से 23 मासूम बच्चों की मौत होने से और बच्चों के बीच जाति, लिंगीय और धर्म के आधार पर होने वाले भेदभाव की वजह से एक नया विमर्श सामने आया कि क्यों न हम बच्चों को उद्योग विनिर्मित पोषण से युक्त कोई ऐसा उत्पाद दें जिससे कि स्कूलों में भोजन नहीं बनाना पड़े। एक तो इससे बच्चों को मिलने वाले जहरीला भोजन की संभावना नगण्य रह जाएगा, दूसरा शिक्षकों और सपोर्टिंग स्टाफ का ध्यान केवल पठन पाठन की तरफ ही रह पाएगा और अंततः किसी भी आधार पर बच्चों के बीच होने वाले भेदभाव को हम रोक भी सकते हैं। इस पर एक विमर्श है।

की-वर्डस: *मिड डे मील, पोषणयुक्त आहार, स्थानीय शासन, लिंगीय भेदभाव, प्राथमिक शिक्षा, आधारभूत संरचना, प्रशासन, प्रबंधन, उत्तरदायित्व*

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

परिचय:

प्राथमिक शिक्षा को मजबूती प्रदान करने के लिए और छोटे छोटे बच्चों के पोषण सुदृढ़ करने हेतु अगस्त 1995 को एक राष्ट्रीय योजना की शुरुआत की गई। यह मीड डे मील कार्यक्रम कहलाया। प्रतिदिन प्रत्येक बच्चे को एक सौ ग्राम सूखा राशन देने की योजना की शुरुआत हुई। वैसे ऐसी किसी भी तरह की योजना सबसे पहले 1920 के दशक में चेन्नई से आरंभ हुआ है। चेन्नई कॉरपोरेशन कौंसिल ने सर्वप्रथम 17 नवंबर 1920 से एक ऐसी योजना प्रस्ताव को स्वीकार किया जिसके तहत कॉरपोरेशन स्कूल के विद्यार्थियों को टिफिन दिए जाने का प्रावधान था।

आरंभ में इसकी कीमत रखी गयी थी। टिफिन प्राप्त करने के लिए प्रत्येक बच्चे को प्रतिदिन के हिसाब से एक आना चुकाना पड़ता था। तब के कॉरपोरेशन अध्यक्ष श्रीमान पी थियागाराया चेट्टी(आधुनिक समय के मेयर जैसा) और उस समय के जस्टिस पार्टी के स्टालवर्ट नेता ने इस योजना के पीछे के कारणों को बताते हुए कहा कि जो भी विद्यार्थी इन स्कूलों में पढ़ते हैं वे बहुत गरीब है, अतः उन्हें ऐसी योजना का लाभ अवश्य मिलना चाहिए अन्यथा स्कूल जैसी संस्था पर बुरा प्रभाव पड़ सकता है। उस वक्त ऐसे विभिन्न स्कूलों में कुल मिलाकर 165 विद्यार्थी पढ़ाई कर रहे थे। बाद में चलकर इस योजना में जब और भी स्कूलों के बच्चों को शामिल किया गया तो इसका परिणाम बहुत सुखद रहा। बच्चों के नामांकन की दर में बहुत तेजी से वृद्धि हुई। उस वक्त के आंकड़ों के अनुसार 1922-23 में विद्यार्थियों की संख्या 811 से बढ़कर 1924-25 में यह 1671 पर पहुंच गया था। इसका मतलब, योजना सफल रहा। लेकिन औपनिवेशिक सरकार को इसकी सफलता से मतलब क्यों होना था। ब्रिटिश सरकार ने इस योजना को असफल करने के लिए प्राथमिक शिक्षा कोष से होने वाले व्यय पर रोक लगा दिया। एक अप्रैल 1925 से यह योजना बंद हो गया। शुरुआत और सफलता बहुत अच्छी रही, किन्तु बंद भी जल्दी ही कर दिया गया। अंततः दवाब पड़ा और दो साल बाद पुनः इस योजना को आरंभ करना पड़ा। 25 विद्यालयों में लगभग एक हजार विद्यार्थियों को इस योजना का पुनः लाभ मिलना शुरू हुआ।

बात पचास और साठ के दशक की है। अब हम आजाद हो चुके थे। एक पंचवर्षीय योजना समाप्त हो चुका था। तमिलनाडु के मुख्यमंत्री के कामराज ने यह निर्णय लिया कि पूरे राज्य के सभी प्राथमिक विद्यालयों में इस योजना को आरंभ किया जाएगा। इस निर्णय के पीछे एक रूचि पूर्ण कहानी है। श्री कामराज ने एक दिन देखा कि कुछ बच्चे गाय और बकरियां चरा रहे थे। रुके और एक बच्चे को बुलाकर पूछा कि तुम अपने गाय और बकरी के साथ क्या कर रहे हो? स्कूल क्यों नहीं गये? प्रश्न छूटते ही बच्चों ने जवाब दिया कि अगर मैं स्कूल जाउंगा तो आप मुझे खाने के लिए भोजन देंगे। हम स्कूल तभी जाएंगे जब हमें वहां खाना मिलेगा। इस तरह मिड डे मील योजना की नींव पड़ी। सभी गरीब बच्चों को अब मुफ्त भोजन मिलना था। वैसे यह काम इतना आसान भी नहीं था। प्रतिवर्ष पहले 200 दिनों के लिए मीड डे मील की शुरुआत हुई। इसके लिए तेरह सौ केंद्र बनाए गए और उस समय लगभग 65 हजार विद्यार्थियों को इस योजना के तहत लाया गया। सरकार को डेढ़ आना प्रति मील खर्च करना था और शेष खर्चा के लिए स्थानीय लोगों से आग्रह करने की योजना बनी थी।

बाद के मुख्यमंत्री एम जी रामाचंद्रन ने इस योजना की पहुंच को और अधिक विस्तृत किया। 1982 से व्यवस्था यह की गयी कि आंगनबाड़ी के 2-5 वर्ष के और 5-9 वर्ष ग्रामीण क्षेत्र के प्राथमिक स्कूलों के विद्यार्थियों (बाद में शहरी क्षेत्र के स्कूलों के विद्यार्थियों के लिए भी आरंभ किया गया) को इस योजना का लाभ मिलेगा।1984 से इस योजना के तहत 10-15 वर्ष के बच्चों को भी शामिल किया गया है।1989 में मुख्यमंत्री करुणानिधि ने चल रहे मील में प्रति पखवाड़ा एक उबला अंडा को शामिल कराया। मुख्यमंत्री जयललिता ने मील में काफी परिवर्तन कराया। 2013 में मील के वेरायटी में बदलाव किया गया, मसाला अंडा दिया जाने लगा(उड़ीसा सरकार ने भी अंडा देना शुरु किया है)अर्थात विद्यार्थियों को विकल्प की सुविधा मिली। अर्थात मील को बेहतर करने का प्रयास हुआ है।

अभी फिलहाल 43243 केन्द्रों पर भोजन तैयार होता है और लगभग 48.57 लाख बच्चे इस योजना से लाभान्वित हो रहे हैं।

इस योजना के पीछे मसला तो यही था कि बच्चों को स्कूल जाने के लिए प्रेरित किया जाय और उनकी उपस्थिति क्लास में अधिक से अधिक हो सके, विशेषकर लड़कियों का, बच्चों को क्लासरूम में लगने वाली भूख से बचाया जा सके और उनके पोषण गुणवत्ता को समृद्ध किया जा सके। मिड डे मील योजना सामाजिक समानता को भी बढ़ाता है और संरक्षण भी करता है, जाति, वर्ग, वर्ण, लिंग को बिना देखे सभी बच्चे एक साथ बैठकर खाना खाते हैं। यहां एक शोध का संदर्भ लेना जरूरी है। यह शोध 2013 का है और विमला रामचंद्रन एवं तारामनी नौरेम1 ने इसे पूरा किया है। इनका मानना है कि लगभग सभी राज्यों में जो भी अच्छे परिवार से थे उनके बच्चे मिड डे मील का भोजन नहीं खा रहे थे। आंध्रप्रदेश में यह देखा गया कि अधिकांश बच्चे बहुत ही गरीब परिवार से थे और उसमें से अधिकांश आदिवासी समाज से। ऐसे बच्चे पिछड़े या उच्च जाति के रसोइया के हाथों से बना खाना नहीं खा रहे थे। कुछ स्कूलों में यह देखा गया कि अपने जाति के साथ ही बैठना उन्हें पसंद था। असम में यह देखा गया कि ब्राह्मण और पिछड़ी जाति परिवार के बच्चे भोजन के समय बिना भोजन किए अपना घर चले गये। बैठने के प्रारूप में लड़की एक साथ और लड़के एक साथ बैठ रहे थे। एक स्कूल में हिन्दु मुस्लिम को अलग अलग बैठाया गया था। राजस्थान में ब्राह्मण, राजपुत, जाट, विश्नोई और गुज्जर मिड डे मील का भोजन नहीं खा रहे थे। मीणा समाज के बच्चे भी मिड डे मील का भोजन तभी खा रहा था जब उस भोजन को मीणा समाज के रसोइया ने ही बनाया हो। बच्चे अपने जाति समूह में ही बैठ रहे थे और लड़का- लड़की के बैठने की व्यवस्था में स्पष्ट विभाजन था। मध्यप्रदेश में तो शिक्षक भी जाति समूह में बैठते दिखे। एक स्कूल में यह भी दिखा कि दलित बच्चे को स्कूल ने उन्हें खाने का प्लेट नहीं दिया यदि वह अपना प्लेट घर से लाना भूल गया हो। स्थिति सामान्य जैसा नहीं दिखता है, इसलिए इस खूबसूरत योजना के हर पहलू पर एक बार फिर से विमर्श होने की जरूरत है।

अंततः इस पूरी व्यवस्था में लगे रहने के लिए गरीब महिलाओं को रोजगार के अवसर दिलाना भी एक उद्देश्य है जिससे वे अपने परिवार का बेहतर भरण पोषण कर सकती है। तामिलनाडु हमेशा से इस दिशा में बेहतर कार्य करने वाला राज्य रहा है। पोषण, आधारभूत संरचना, प्रशासन और प्रबंधन हर दिशा में एक उदाहरण स्थापित किया है। पूरे वर्ष में 312 दिन तक इस योजना से लाभार्थियों को लाभ मिल रहा है। एक रिसर्च के अनुसार2 पूरे सैंपल में से तामिलनाडु राज्य में 25 प्रतिशत बच्चे ऐसे थे जिन्होंने पहली बार मीड डे मील में ही फल खाया था, बिहार में यह प्रतिशत 43 और राजस्थान में 19 प्रतिशत बच्चे इस श्रेणी में थे। दूध उपभोग के संदर्भ में यह प्रतिशत क्रमशः 31, 56 और 19 है। तामिलनाडु में 85 प्रतिशत बच्चों ने खाना की गुणवत्ता को अच्छा बताया, बिहार में यह प्रतिशत 6 और राजस्थान में यह 80 प्रतिशत तक है। बिहार की स्थिति यहां काफी चिंताजनक दिखती है। जब माता पिता से यही सवाल किया गया तो यह प्रतिशत क्रमशः 65, 3 और 81 रहा। बिहार में न तो बच्चे ही और न ही माता पिता भोजन गुणवत्ता को सही बताया। पीने योग्य पानी के संबंध में यह परिणाम आया कि तामिलनाडु के शतप्रतिशत स्कूलों में ऐसी व्यवस्था पाई गयी, बिहार में यह प्रतिशत 93 और राजस्थान में यह 95 प्रतिशत है। आश्चर्यजनक तरीके से बिहार और राजस्थान में कुछ स्कूल ऐसे रहे जिनमें पानी पीने तक की व्यवस्था नहीं थी।

किचन शेड की बात करें तो तामिलनाडु में 95 प्रतिशत स्कूलों में यह पाया गया, बिहार में केवल 14 तो राजस्थान में यह 37 प्रतिशत स्कूलों में किचन शेड की व्यवस्था देखी गयी। हालांकि योजना आयोग का 2010 में एक रिपोर्ट आया था जिसमें यह कहा गया था कि झारखंड, कर्नाटक और उत्तरप्रदेश में यह योजना संतुष्टि के स्तर पर संचालित नहीं हो रहा था। योजना आयोग ने तो यहां तक कह दिया था कि विद्यालयों ने मिड डे मील का प्रबंधन उस दिशा में नहीं कर पाया जिससे कि बच्चों के स्वास्थ्य की गुणवत्ता को बेहतर किया जा सके। आयोग ने स्पष्ट किया कि तामिलनाडु और केरल ही दो ऐसे राज्य रहे जिन्होंने पोषक युक्त भोजन की सुविधा देने के लिए अपनी आधारभूत संरचना को उस दिशा में विकसित कर सका है। शेष सभी राज्यों में सुविधाएं अनुपस्थित रही है3।

यह भी सच है कि बिहार के विद्यालयों में मिड डे मील की वजह से नामांकन काफी तेजी से बढ़ा है। आंकड़े यह बताते हैं कि 1995-96 में नामांकित 107.1 मिलियन विद्यार्थियों की तुलना में 2011-12 में यह बढ़कर 137.7 मिलियन हो गया है। इसका मतलब यह था कि 99 प्रतिशत विद्यार्थी स्कूल जा रहे थे। यह बहुत बड़ी उपलब्धि है। लेकिन बच्चों के बढ़ते नामांकन के साथ साथ उनके स्वास्थ्य पर या भोजन की गुणवत्ता पर ध्यान देने में या तो लापरवाही हुई या जानबूझ कर ऐसा किया गया। भोजन की गुणवत्ता नहीं बढ़ सकी4।

सन दो हजार के आरंभ के वर्षों में सर्वोच्च न्यायालय ने डॉ सक्सेना और श्री हर्ष मंदर द्वारा निर्मित एक समिति का गठन किया। इस समिति का काम था कि मीड डे मील, उनकी गुणवत्ता,क्रियान्वयन आदि का मूल्यांकन कर न्यायालय को रिपोर्ट करें। समिति ने बताया कि, सैंपल के सभी स्कूलों में गर्म पका खाना मिल रहा है, सत्तर प्रतिशत बच्चे, अभिभावक और शिक्षकों ने माना कि खाने का मेन्यू बदलता है पर ऐसा निरंतर नहीं हो पाता, साठ प्रतिशत बच्चों ने कहा कि हरी सब्जियां खाने में दी जाती है और सत्तर से अस्सी प्रतिशत बच्चे भोजन की गुणवत्ता से संतुष्ट दिखे, रसोईया को समय पर वेतन मिल रहा है, लगभग आधे स्कूलों में किचेन शेड की व्यवस्था है। दूसरी ओर, बरसों बाद 2013 के एक सर्वे में उनके सैंपल में केवल 14 प्रतिशत स्कूलों में किचेन शेड मिला था5। अधिकांश विद्यालयों में बच्चे हाथ धोने, पानी संरक्षित करने और खाने के प्रति उत्साहित एवं अनुशासित दिखे, आमतौर {95%} पर भोजन परोसने और खाने में कोई भेदभाव नहीं मिला और बिहार में केवल 67.9 प्रतिशत नामांकित बच्चे ही मिड डे मील का लाभ ले पा रहे हैं। यह मूल्यांकन उस समिति की है जिसे सर्वोच्च न्यायालय ने गठित किया था6।

बिहार के संदर्भ में 2009-10 में 'असर' नामक संस्था ने भी एक सर्वेक्षण किया। उसमें यह कहा गया है कि 2005 में 38.4 प्रतिशत स्कूलों में मिड डे मील उपलब्ध कराया जा रहा था, जो 2007 में यह बढ़कर 62.7 प्रतिशत हो गया। इस सर्वेक्षण के माध्यम से राज्य सरकार के प्रयासों की सराहना की गई है। इन तथ्यों के विश्लेषण से हम पाते हैं कि मिड डे मील योजना की वजह से बच्चों के नामांकन का उद्देश्य तो पूरा होता दिख रहा है। लेकिन इस योजना के लागू होने के 18 वर्षों के बाद भी भोजन की गुणवत्ता ऐसी नहीं हो सकी जिससे सारण जिले के एक स्कूल में मीड डे मील खाने की वजह से 23 बच्चों का मौत हो गया। यह काला दिन 16 जुलाई 2013 का है। सारण जिले के गण्डमाल स्कूल में इन बच्चों की संख्या अन्य दिनों की अपेक्षा अधिक था, क्योंकि पुस्तकों के बंटवारे की बात अभिभावकों के जानकारी में आया7। इस स्कूल का अपना भवन नहीं था और इसे आसपास के सामुदायिक

भवन में चलाया जा रहा था। यहां किचन शेड भी नहीं था और बरामदा पर खाना पकाया जाता था। खाद्यान्न आपूर्ति को रखने की भी उचित और पर्याप्त व्यवस्था नहीं थी। आपूर्ति करने वाला एक शिक्षक के घर ही जमा कर के रखता था और रसोईया प्रतिदिन के हिसाब से उनके घर से सामान लाने का काम करता था। उस दिन खाना बनाने की तैयारी हुई, पैन में तेल डालते ही काला धुआं उठता है और गंदा सा बदबू भी आता है। यह बात रसोईया प्रधानाध्यापिका को कहती भी है। दुर्भाग्यवश उनकी बात को कोई भी नोटिस नहीं करता। खाना बनकर तैयार हो गया। भोजन का रंग सामान्य नहीं था। एक बार फिर से रसोईया और बच्चे भोजन की शिकायत करते हैं। तब भी कोई कारवाई नहीं होती और उल्टे उन्हें डांट फटकार कर चुप कराया जाता है। बच्चे उस भोजन को खाने वाले थे जो उसकी मौत के लिए जिम्मेदार बनता। रसोईया को इस मौत के तांडव को केवल देखते रहना था।

भोजन करते ही बच्चे बेहोश होने लगे, उनकी स्थिति बदतर हो रहा था। संकट की गंभीरता को देखते हुए आरंभ में प्रधानाध्यापिका मीना देवी के पति ने उनके इलाज के सारे खर्च को देने की बात कहा। संकट बड़ा था। एक बच्चे की मौत हो गई। हड़कंप मचना ही था, माता पिता अपने बच्चे को लेकर आसपास के अस्पताल भागने लगे। गरीब भरोसा किसपर करे, पहले से बदतर स्वास्थ्य व्यवस्था की स्थिति के बीच सरकारी अस्पताल के डाॅक्टरों का इलाज करने के प्रति उदासीनता ने अभिभावकों के हिम्मत को तोड़ दिया, कभी जिला अस्पताल ले जाने का आग्रह तो कभी पटना ले जाने की मिन्नतें, इनके बीच जकड़न और उलझन में ऐसा फंसे कि बिना कोई उचित और पर्याप्त इलाज की वजह से चार महत्वपूर्ण घंटा बर्बाद हुआ और अंततः 23 मासूम बच्चों की मौत हो गई। शर्मनाक! इतनी अच्छी मिड डे मील योजना पर खूब सवाल हुआ। बाद में अधिकारियों ने कहा8। कूकिंग वायल मीना देवी के पति अर्जुन राय की दुकान से खरीदा गया था। छपरा कोर्ट ने इसे जघन्यतम अपराध की श्रेणी में रखा और मीना देवी पर दस एवं सात साल की कठोर सजा का आदेश दिया। हालांकि कोर्ट ने उन्हें हत्या के आरोपी से बरी कर दिया।

बाद में, स्कूल की पूरी व्यवस्था को पास के दूसरे गांव में स्थानांतरित किया तो गया परन्तु अभिभावक न केवल बच्चों को भेजने डर रहे थे बल्कि मिड डे मील भोजन खाने से साफ मना भी कर दिया9। सरकारी प्रयास से 2015 में अभिभावक अपने बच्चों को भेजने लगे और भोजन खाने पर आंशिक संशय बरकरार रहा। यह दुर्घटना 'असर' और डॉक्टर सक्सेना एवं हर्ष मंदर के मूल्यांकन के बाद का है। तो क्या, मूल्यांकन और सर्वे शोध में भी आंकड़ों के साथ हेराफेरी किया गया। बड़ा सवाल है। वर्तमान में बिहार के 70238 स्कूलों में मिड-डे-मील योजना चलाया जा रहा है और दस मिलियन से अधिक वर्ग एक से लेकर आठ तक के बच्चों को इस योजना से सीधे लाभ मिल रहा है10।

पूरे देश में इस योजना से बारह करोड़ से अधिक बच्चों को भोजन मिल रहा है। इसके लिए लगभग 20 लाख से अधिक रसोइया और सहायक कार्य कर रहे हैं। सात लाख से ज्यादा किचन और स्टोर रूम बनाया गया है जिससे कि भोजन में पोषण आदि की गुणवत्ता बनी रहे। वैसे बजटीय राशि के प्रावधानों की एक समीक्षा करें तो पाते हैं कि वित्तीय वर्ष 2009-10 की तुलना में अगले वित्तीय वर्ष में यह लगभग दो हजार करोड़ से ज्यादा की वृद्धि हुई थी। वित्तीय वर्ष 2014-15 में इस राशि की मात्रा को बढ़ाकर दस हजार करोड़ से भी अधिक कर दिया

गया था11। अब इसका असर यह हुआ कि निजी क्षेत्रों की नजर इस हजारों करोड़ के बाजार पर पड़ा। बिस्किट कंपनी 2008 से ही संसद सदस्यों को पके पकाएं भोजन की जगह पौष्टिक बिस्किट देने के लिए दबाव डालने लगे12। कुछ संसद सदस्यों ने संबंधित मंत्रालय को इस संबंध में पत्र भी लिखा। परन्तु, इस दबाव एवं प्रस्ताव को सरकार के द्वारा अस्वीकृत और निरस्त कर दिया गया।

मिड डे मील में परोसे गए जहरीला भोजन की वजह से बिहार में जब 23 बच्चों की मौत हुई, संबंधित नये नये विमर्श सामने आया। एक तो निजी क्षेत्र पहले से ही तैयार बैठा था, तो दूसरी ओर प्रो दीपक पेंटल ने इस विमर्श को समर्थन देकर गति दे दिया। प्रो पेंटल का मानना था कि बच्चों में कुपोषण से बचाने के लिए हमें उद्योगों द्वारा निर्मित जैसे कि बेबी फूड, बिस्किट या चिक्की जैसे पोषक युक्त भोजन पर विचार करना चाहिए। ऐसे उत्पाद को एक रणनीति विशेष के आधार पर तैयार करने की जरूरत है। सोया प्रोटीन,आयरन, आयोडीन, विटामिन और अन्य आवश्यक प्रकार की खनिज मिलाकर उत्पाद को तैयार करना चाहिए। ऐसे विनिर्मित भोज्य पदार्थ एक दिन या एक रात में जहरीला भी नहीं होता, उसे आसानी से संरक्षित किया जा सकता है। अगर हम ऐसा कर पाते हैं तो निश्चित ही पांच वर्षों में हमें कुपोषण से मुक्ति मिल जाएगी13। हमें अच्छे से पता है कि राजनीति की अपनी सीमाएं हैं, दलों को चुनाव जीतने के लिए आदमी और धन दोनों चाहिए जिससे चुनाव जीता जा सके। ये सारी चीजें वितरण के ठीकेदारी व्यवस्था से मिलना आसान हो जाता है, अत: राजनीति को ऐसी ही लचर व्यवस्था सूट करता है। एक अच्छे उद्देश्य के साथ मिड डे मील योजना की शुरुआत हुई परन्तु नौकरशाही और ठीकेदारी के मकड़जाल में फंसकर यह बेहतर परिणाम नहीं दे पा रहा है, जैसे उत्तरप्रदेश में मिड डे मील के लिए खाद्यान्नों की आपूर्ति करने की ठीकेदारी एक शराब माफिया को दे दिया जाना। राजनीति और ठीकेदारी के घाल मेल से उत्तरदायित्व की स्थापना में समस्या आती है। उत्तरप्रदेश में ही पोन्टी चड्ढा को आंगनबाड़ी के लिए खाद्यान्नों की पूरी आपूर्ति करने की ठीकेदारी थी। सरकार के बदलने से भी उसकी स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आता था जबकि यह सार्वजनिक क्षेत्र में विमर्श का विषय था कि वह खाद्यान्नों की खराब गुणवत्ता वाली अनाज की आपूर्ति करता है। हालांकि, दिल्ली में भी भोजन के खराब गुणवत्ता पर काफी चर्चा हुई है। ठीकेदारों को केवल लाभ चाहिए, भले ही आवश्यक वस्तुओं पर भी लाभ के लिए व्यय को कम क्यों न करना पड़े। दूसरी ओर, नौकरशाही खुद में एक सीमा है और न्यायपालिका सीमाओं के दायरे को ही बढ़ाता है। ऐसे में स्कूल स्कूल खाना पकाकर खिलाना एक खानापूर्ति रह जाएगा। अतः उद्योग आधारित भोज्य पदार्थ पर ध्यान देने की जरुरत है।

उत्तरदायित्व पर यदि सवाल उठता है कि अंततः किसकी जिम्मेदारी है अपने नागरिकों को भूख से आजादी देने की। प्राथमिक तौर पर यह जिम्मेदारी राज्य की लगती है, क्योंकि सभी तरह की आर्थिक गतिविधियों एवं संस्थात्मक नियंत्रण एवं नियमन राज्य के पास है। ऐसी स्थिति में राज्य को ही सभी नागरिकों के भूख और संवैधानिक अधिकारों की चिंता करनी चाहिए। लेकिन हमारे संविधान में कर्तव्यों की भी स्पष्ट रूप रेखा दी गई है। किसी व्यक्ति या संस्था को अपनी इस जिम्मेदारी से पीछे भी नहीं हटना चाहिए, अगर हमारे सामने कोई भूख प्यास से परेशान हो तो उस वक्त हम राज्य को जिम्मेदार ठहराने की बजाय उसकी तुरंत मदद करने पर जोर देना होगा। एक और उदाहरण लेते हैं। मान लें कि एक परिवार में एक बच्ची को जितनी मात्रा में भोजन मिलना

चाहिए, किसी कारण से नहीं मिल पा रहा है। अब ऐसे में प्राथमिक जिम्मेदारी तो उसके परिवार वालों की ही बनती है। लेकिन राज्य को यहां जरूर देखना चाहिए कि भेदभाव किसी भी स्तर पर न हो। लड़की होने की वजह से यदि भोजन की पर्याप्त मात्रा नहीं मिल पा रही है तो इस भेदभावपूर्ण व्यवहार से मुक्ति राज्य को दिलानी ही चाहिए। भूख से आजादी तभी दिलायी जा सकती है।

अमर्त्य सेन ने इस विषय को अन्य तरीके से वर्णन किया है। उन्होंने सूखे की समस्या को लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था के साथ जोड़ा है और सूखा भूख से जुड़ा है। उनका मानना है कि कोई भी लोकतांत्रिक देश सूखा को बर्दाश्त नहीं कर सकता। कोई दल यदि सूखे की स्थिति को लंबे समय के लिए उपेक्षा किया तो वह उसके लिए आत्महत्या करने जैसा होगा, दुबारा उसे सत्ता मिलना एक दुरूह कार्य होगा। दुनियां में ऐसा कहीं उदाहरण नहीं मिलता है कि कोई भी लोकतांत्रिक देश सूखा से निपटने में देरी किया हो। भूख से निपटना चुनौती और जिम्मेदारी दोनों है। हर सरकारें अलग अलग योजनाओं के माध्यम से इस चुनौती से निपटने की कोशिश भी कर रही है।

निष्कर्ष:

मिड डे मील योजना को लेकर जिस प्रकार तामिलनाडु ने बेहतर कार्य किया है, गुजरात में, राजस्थान में, केरल में अच्छा काम हुआ है और हो भी रहा है, उस प्रक्रिया को पूरे देश में बेहतर तरीके से लागू करने की जरूरत है। बिहार की दुखदायक घटना से जिसमें 23 बच्चे की मौत हो गई थी, उस घटना से हमें सीखने की जरूरत है। प्रशासनिक और नियमन की व्यवस्था को पुनर्संगठित करने की जरूरत है, जो गलत करें उसे सजा भी तुरंत मिले, ऐसी व्यवस्था बनानी ही होगी, मीडिया के सभी प्रारुप को अधिक संवेदनशील होने की आवश्यकता है, रिपोर्टिंग पूर्वग्रह से ग्रसित न हो, मिड डे मील योजना के प्रति जागरूकता अभियान भी मीडिया के द्वारा चलाया जाना चाहिए। निजी और सार्वजनिक के बीच विवाद में सरकारों को नागरिकों के हितों को प्राथमिकता देनी चाहिए, स्वयं सहायता ग्रुप या गैर सरकारी संगठन पर कड़ी निगरानी की भी जरूरत है, साथ ही ठीकेदारी व्यवस्था भी समीक्षा के दायरे में रहे। ठीकेदारी का पहला उद्देश्य किसी भी कीमत(जीवन की कीमत पर भी) पर लाभ बटोरना होता है। भोजन में पोषक तत्व कैसे बढ़े, इसकी भी चिंता हमारी प्राथमिकता बने। इसके साथ ही विनिर्मित पोषक उत्पाद एक विकल्प हो सकता है या नहीं, इसे पायलट प्रोजेक्ट के रुप में लिए जाने पर विस्तृत विमर्श हो सके, इस दिशा में भी आगे बढ़ने की आवश्यकता है।

संदर्भ:

1. रामाचंद्रन, विमला एंड नोरम, तारामनी(2013)' व्हाट इज मिन्स टू बी ए दलित और ट्राइबल चाइल्ड इन आवर स्कूल, ए सिन्थेसिस आफ ए सिक्स स्टेट्स क्वालिटेटिव स्टडी, इन इकानॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली 48(44), 2 नवंबर, 2013.

2. नेशनल यूनिवर्सिटी आफ एडूकेशन प्लानिंग एंड एडमिनिस्ट्रेशन, 2013

3. रिवाइज्ड स्कीम टू फोकस इन फूड क्वालिटी एंड हायजिन, द हिन्दुस्तान टाइम्स, अगस्त 5, 2013.

4. वही

5. नेशनल यूनिवर्सिटी आफ एडूकेशन प्लानिंग एंड एडमिनिस्ट्रेशन, 2013.

6. mdmsbihar.org/saxena-harsmandar-samiti.asap#

7. खेरा, रीतिका(2013)' मिड डे मील: लुकिंग अहेड, इन इकानॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली 48 (32), 10 अगस्त 2013.

8. द इंडियन एक्सप्रेस (2016)' बिहार मिड डे मील ट्रेजेडी, एवरीथिंग यू नीड टू नो एबाउट द इन्सीडेंट, 29 अगस्त 2016.

9. वही

10. dopahar.org/dopahar/

11. mdm.nic.in/mdm_website/

12. द्रेज, जीन एंड खेरा, रीतिका(2008)' ग्लूकोज फार द लोकसभा, द हिन्दुस्तान टाइम्स, 14, अप्रैल 2008.

13. पेंटल, दीपक(2013)' फूड फार आल मिन्स, द इंडियन एक्सप्रेस, 26 जुलाई 2013.